विवेक चटर्जिया

मलेरिया के खिलाफ जंग

आलेख: गिरिराज अग्रवाल फोटो: मुकेश झा

अमेरिका और भारत के वैज्ञानिक मिलकर मलेरिया का टीका और इसके प्रभावी इलाज की दवाएं विकसित करने का प्रयास कर रहे हैं।

मलेरिया की चुनौती विश्वस्तर पर गंभीर बनी हुई है। हर साल 50 करोड़ लोग मलेरिया की चपेट में आते हैं और इनमें से 10 लाख से भी ज़्यादा दम तोड़ देते हैं जिनमें से ज़्यादातर अफ्रीकी महाद्वीप में सहारा रेगिस्तान के दक्षिण में मौजूद देशों के बच्चे होते हैं। भारत में स्थिति इतनी गंभीर तो नहीं है लेकिन चिंताजनक ज़रूर है क्योंकि घातक और जानलेवा पी. फाल्सीपरम मलेरिया के मामले लगातार बढ़ रहे हैं। साथ ही बहुत से मामलों में क्लोरोक्विन जैसी पारंपरिक दवा के प्रति मलेरिया परजीवी में प्रतिरोधक शक्ति उत्पन्न हो रही है जिससे इस दवा का असर कम हो रहा है। यही नहीं, मलेरिया का संक्रमण फैलाने वाले मच्छरों को मारने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले कीटनाशकों का प्रभाव भी कई क्षेत्रों में कम हो रहा है।

इसने भारत में मलेरिया की रोकथाम की रणनीति पर नए सिरे से गौर करने को मज़बूर किया है। मलेरिया के खिलाफ भारत की इस जंग में अमेरिका भी कई स्तरों पर भागीदारी कर रहा है। अटलांटा, जॉर्जिया स्थित रोग नियंत्रण केंद्र यानी सीडीसी भारत के राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान के साथ कई परियोजनाओं में भागीदारी कर रहा है। भारत-अमेरिका भागीदारी ने मलेरिया का एक प्रायोगिक टीका बनाने में भी सफलता हासिल की है जिसके मानवीय परीक्षण शीघ्र शुरू होने की उम्मीद है।

भारत में हर साल कितने लोग आखिर मलेरिया के शिकार होते हैं? किसी के पास सटीक जवाब नहीं है। लेकिन वैज्ञानिक इस बात पर एकमत हैं कि आंकड़ों का पूरा सच सामने नहीं आ पाता। राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान के जबलपुर फ़ील्ड स्टेशन के शोधकर्मी प्रवीण भारती कहते हैं, ''निजी डॉक्टरों के पास जाने वाले और खुद दवा लेने वाले बहुत से मलेरिया मरीजों के बारे में सूचनाएं आंकड़े एकत्र करने वाले विभागों तक पहुंच ही नहीं पाती।'' नेशनल वेक्टर बोर्न डिजीज कंट्रोल प्रोग्राम के आंकड़ों के मुताबिक भारत में पिछले दस सालों में हर साल मलेरिया के लगभग 20 लाख मामले सामने आते रहे हैं और इनमें लगभग एक हज़ार मरीज़ों की मौत होती रही है। लेकिन मलेरिया विशेषज्ञ मानते हैं कि मलेरिया के बारे में यह भारत की सही तस्वीर नहीं है। मलेरिया विशेषज्ञ और अमेरिकी दूतावास में स्वास्थ्य अताशे डॉ. अल्ताफ़ लाल बताते हैं, ''भारत में मलेरिया के मरीजों का आंकड़ा दर्ज़ मामलों से 10 से 40 गुना है।''

भारत में मलेरिया यूं तो समय-समय पर सभी प्रदेशों को अपनी चपेट में लेता रहा है लेकिन उड़ीसा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और पूर्वोत्तर राज्यों में यह ज़्यादा है। जबलपुर स्थित क्षेत्रीय मलेरिया अनुसंधान केंद्र की मुखिया डॉ. नीरू सिंह बताती हैं, ''अविभाजित मध्य प्रदेश यानी अब छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश का इलाका मलेरिया के लिहाज से उड़ीसा के बाद सबसे ज़्यादा प्रभावित है। इसमें भी आदिवासी ज़्यादा प्रभावित हैं। मलेरिया के 50 फीसदी मामले यहां की 19 फ़ीसदी आदिवासी जनसंख्या में ही पाए जाते हैं और इसमें अब तीन चौथाई मामले फाल्सीपरम

ऊपर: जबलपुर, मध्य प्रदेश स्थित सूपा ताल। ऐसी जगहों पर एकत्र पानी में मच्छर पैदा होते हैं जिससे आसपास रहने वाले लोगों के मलेरिया का शिकार होने की आशंका रहती है।

ऊपर दाएं: भोपाल के सरकारी होम्योपैथिक मेडिकल कॉलेज में नर्स कल्पना बघेल (दाएं) मलेरिया की जांच के लिए मरीज़ मुन्नी का खून लेते हुए।

दाएं: राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान के जबलपुर फ़ील्ड सेंटर में सीनियर रिसर्च फ़ेलो विधान जैन (बाएं) और माइक्रोस्कोपी प्रयोगशाला प्रभारी किरण अवस्थी (बीच में) सेंटर्स फ़ॉर डिजीज कंट्रोल के विशेषज्ञ डॉ. एरिक टॉनग्रेन (दाएं) को अपनी कार्यविधि के बारे में बताते हुए। रिसर्चर प्रवीण भारती पीछे खड़े हैं।

नीचे दाएं: जबलपुर फ़ील्ड स्टेशन की मुखिया नीरू सिंह बीटा काउंटर मशीन में रक्त के नमूनों को रखती हुईं। यह मशीन रक्त का विश्लेषण कर यह बताती है कि रक्त में कितनी टी कोशिकाएं हैं। टी कोशकाएं ऐसी श्वेत कोशिकाएं हैं जो किसी भी व्यक्ति की प्रतिरोध क्षमता के बारे में बताती हैं।

मलेरिया के सामने आ रहे हैं। '' जबलपुर फ़ील्ड सेंटर में उप निदेशक और वैज्ञानिक एम. एम. शुक्ला कहते हैं कि भारत में ऐतिहासिक तौर पर प्लाजमोडियम वाइवैक्स के मामले ज़्यादा सामने आते रहे हैं जो फाल्सीपरम के मुकाबले कम घातक है।

जबलपुर के मलेरिया अनुसंधान केंद्र की स्थापना 1986 में मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के आदिवासी क्षेत्रों में मलेरिया के प्रकोप का अध्ययन करने के लिए खासतौर से की गई। यहां रोग नियंत्रण केंद्र, अटलांटा के साथ मिलकर कई तरह की मलेरिया शोध परियोजनाओं पर अमल किया जा रहा है। यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि रोग नियंत्रण केंद्र की स्थापना 1946 में अमेरिका में मलेरिया पर काबू पाने के मकसद ही की गई थी। जबलपुर केंद्र में गर्भवती महिलाओं में मलेरिया का प्रकोप और दिमागी मलेरिया के मामलों में स्नायु तंत्र पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों का जायजा शामिल है। इन शोध परियोजनाओं के लिए अमेरिका के नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ़ हेल्थ और यूएसएड ने धन उपलब्ध कराया है। रोग नियंत्रण केंद्र की मलेरिया शाखा के विजिटंग प्रोफेसर डॉ. एरिक जॉन टॉनग्रेन वर्ष 2007 में जबलपुर आकर साझा परियोजनाओं का जायजा ले चुके हैं। वह कहते हैं, ''हमारा मुख्य उद्देश्य मलेरिया के मामलों और उनसे होने वाली मौतों की संख्या को कम करना, साथ ही जबलपुर क्षेत्र में महामारी और इसके जैविक पहलू को समझना है।''

रोग नियंत्रण केंद्र ने संस्थान को अपनी विशेषज्ञता उपलब्ध कराई है। लाल कहते हैं, ''शोधकर्मियों, तकनीशियनों और रोग विशेषज्ञों को प्रशिक्षण में मदद दी गई और संयुक्त कार्यशालाएं आयोजित की गईं।'' सीडीसी की ओर से इन परियोजनाओं का ज़िम्मा मलेरिया शाखा के डॉ. वेंकटाचलम उदयकुमार ने संभाला हुआ है।

संयुक्त शोध के क्या नतीजे निकले हैं? डॉ. जॉन इशारा करते हैं कि खून की जांच में कुछ ऐसी जैविक प्रक्रिया पाई गई जो इस बात का आभास देती है कि किन लोगों पर दिमागी मलेरिया का प्रकोप ज़्यादा घातक होगा। इससे इन मरीज़ों के इलाज में अतिरिक्त सावधानी बरती जा सकेगी। उल्लेखनीय है कि दिमागी मलेरिया के मामलों में अफ्रीका में सिर्फ 30 फीसदी ही मरीज़ जीवित बचते हैं।

गर्भवती महिलाओं पर शोध के दौरान 600 से ज़्यादा महिलाओं की गर्भधारण करने के बाद से लगातार जांच की गई। शोधकर्मी प्रवीण भारती बताते हैं कि जो महिलाएं मलेरिया की शिकार थीं, उनके बच्चों का वजन कम पाया गया। ऐसी मांओं में मृत बच्चा होने या समय से पहले बच्चा होने के मामले भी ज़्यादा पाए गए। इन महिलाओं के बच्चों के तीन साल तक के होने तक उन पर नज़र रखी गई जिससे पता चल सके कि प्लासेंटा में मलेरिया परजीवी की मौजूदगी पाए जाने का बच्चे पर तत्काल और उसके बाद तीन साल की उम्र तक क्या असर पड़ता है। प्रवीण भारती के अनुसार इन महिलाओं का समय रहते इलाज करने पर हम इन बच्चों की अच्छी सेहत सुनिश्चित कर सकते हैं।

भारत में मलेरिया सभी आयु वर्ग के लोगों में पाया जाता है जबकि अफ्रीका में यह विशेषकर बच्चों को अपना शिकार बनाता है। अफ्रीका में मलेरिया पर हुए दस साल के अध्ययन का प्रारूप तैयार करने वाले डॉ. लाल कहते हैं, ''इसका कारण यह है कि अफ्रीका में मलेरिया परजीवी का हमला इतनी बार होता है कि बचपन गुजरने के बाद लोगों में इसके प्रति संक्रमण पैदा हो जाता है। जबकि भारत में मलेरिया कुछ खास क्षेत्रों में ज्यादा है। अमेरिका में क्लोरोक्विन और उस समय के प्रभावी कीटनाशक डीडीटी के लगातार तीन साल तक प्रभावी इस्तेमाल से मलेरिया पर काबू पाया गया। भारत इस अनुभव से क्या सीख सकता हे? लाल कहते हैं, ''भारत के पास मलेरिया उन्मूलन के लिए ज़रूरी चीजें और और ज्ञान है। भारत के पास अपने सफल मॉडल हैं। जबलपुर केंद्र में डॉ. नीरू सिंह और उनकी टीम ने बैतूल में सफलतापूर्वक मलेरिया पर काबू पाया है।''

बैतूल में नब्बे के दशक में मलेरिया के मामलों की संख्या 25 गुना बढ़कर वर्ष 2000 में प्रति एक हज़ार जनसंख्या 11.37 तक पहुंच गई। सिंह कहती हैं, ''राज्य सरकार ने मलेरिया अनुसंधान केंद्र से मदद मांगीं। हमने सरकार को बताया कि मच्छरनाशक के तौर पर डीडीटी काम नहीं कर रहा था। उसकी जगह घरों के अंदर मच्छरों को मारने के लिए सिंथेटिक पायरेथ्रोइड (एसपी) का इस्तेमाल किया गया। जलभराव में मच्छर के लार्वा खाने वाली गंबूसिया और गप्पी मछलियां छोड़ी गईं। मलेरिया का पता लगाने के लिए रैपिड डायग्नोस्टिक टेस्ट शुरू किया गया जिससे 10 मिनट के अंदर यह पता चल जाता है कि व्यक्ति मलेरिया से पीड़ित है या नहीं। सही जांच के बाद केवल पी. वाइवैक्स का ही क्लोरोक्विन से इलाज किया गया। पी. फाल्सीपरम का इलाज सल्फाडोक्सिन पायरीमीथेमाइन से किया गया।'' सिंह के अनुसार जनवरी 2001 से शुरू इस परियोजना में पांच साल के अंदर बैतूल से मलेरिया नब्बे फ़ीसदी तक कम हो गया। कई स्थानों पर क्लोरोक्विन के प्रति प्रतिरोध से निपटने के लिए आर्टेमिसनिन आधारित कॉम्बिनेशन थैरेपी का इस्तेमाल किया गया। रोकथाम के उपायों के तौर पर कीटनाशक उपचारित मच्छरदानियों का इस्तेमाल किया गया।

मलेरिया पर काबू पाने की चंद सफलताओं के बावजूद इसकी रोकथाम के लिए टीका बनाने की आवश्यकता कम नहीं हुई है। भारत में इंटरनेशनल सेंटर फॉर द जेनेटिक एंड इंजीनियरिंग बायोटेक्नॉलोजी भी पी. वायवैक्स और पी. फाल्सीपरम दोनों तरह के मलेरिया के लिए प्रभावी टीका बनाने में जुटा है। इस संस्थान को अमेरिकी संस्था प्रोग्राम फ़ॉर एप्रोप्रिएट टेक्नॉलोजी इन हेल्थ द्वारा स्थापित मलेरिया वैक्सीन इनिशिएटिव से भी वित्तीय मदद मिली। इसके अलावा नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ हेल्थ और वाल्टर रीड से भी जानकारियों का आदान-प्रदान हुआ।

संस्थान के निदेशक डॉ. वीरेंद्र चौहान बताते हैं कि फिलहाल इनकी विषाक्तता की जांच चल रही है और अब तक हुए परीक्षणों से उन्हें उम्मीद है कि ये टीके इस मानक पर खरे उतरेंगें। भारत सरकार की मंजूरी मिलते ही पी. वायवैक्स और पी. फाल्सीपरम टीकों का मानव परीक्षण का पहला चरण शुरू होगा जिसे मुंबई के आसपास कहीं करने की योजना है। उनके अनुसार संस्थान ने अच्छी निर्माण पद्धति का अनुसरण करते हुए इन टीकों का प्रयोगशाला और शांत बायोटेक नामक कंपनी के साथ मिलकर व्यापारिक स्तर पर उत्पादन करने में सफलता हासिल की है। ये दोनों ही टीके दो एंटीजनों को मिलाकर बनाए गए हैं यानी कांबिनेशन वैक्सीन हैं।

डॉ. चौहान के मुताबिक सब कुछ ठीक रहा तो इन टीकों का दूसरे चरण का परीक्षण जबलपुर में तैयार किए जा रहे टीका परीक्षण स्थल या फिर सुंदरगढ़, उड़ीसा में किया जा सकता है। जबलपुर में टीकों के परीक्षण के लिए 52 गांवों के 35,000 हजार लोगों का मलेरिया प्रोफाइल तैयार किया गया है। इनके खून के नमूने लेकर उनकी जांच की गई है और उन पर लगातार नज़र रखी जाती है। ये सभी गांव जबलपुर से 18 से 75 किलोमीटर की दूरी तक फैले हुए हैं।

ग्लैक्सो स्मिथक्लाइन यानी जीएसके और वाल्टर रीड आर्मी रिसर्च इंस्टीट्यूट ने मिलकर भी मलेरिया का टीका विकसित किया है। मोजांबिक में इसके दूसरे चरण के मानव परीक्षण चल रहे हैं। डॉ. जॉन के मुताबिक मलेरिया के गंभीर मामलों को इसके जरिये 50 फीसदी तक कम करने में सफलता मिली है।

तो हम मलेरिया के टीके की कितनी जल्दी उम्मीद कर सकते हैं? पहले के वादों के खरा न उतर पाने के चलते अब कोई भी तय समय नहीं बताना चाहता। अब तक वैज्ञानिकों के बजाय मलेरिया परजीवी ज़्यादा चतुर साबित हुआ है।

लेकिन इस बार वैज्ञानिकों को सफलता की आशा है। डॉ. चौहान बताते हैं, ''हमारा मलेरिया का टीका अन्य टीकों से इस मायने में भिन्न होगा कि यह सिर्फ मलेरिया से प्रभावित इलाकों में दो साल तक के बच्चों को ही दिया जाएगा।'' आईसीजीईबी के वैज्ञानिक टीका बनाने की प्रक्रिया के दौरान मलेरिया परजीवी के बारे में जानकारी लेकर वनस्पति और समुद्री उत्पाद आधारित मलेरिया रोधी दवाओं के विकास पर भी कारगर काम कर रहे हैं जिससे कि मौजूदा दवाओं के प्रति मलेरिया परजीवी के प्रतिरोधी शक्ति अख्तियार करने पर नई दवाएं उपलब्ध हों और मलेरिया नए सिरे से सर न उठा सके।

लाल कहते हैं, ''यदि यह केंद्र ऐसा टीका बनाने में सफल रहता है जिसका सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली में प्रभावी औजार के रूप में इस्तेमाल किया जा सके तो यह अमेरिका-भारत सहयोग का बड़ा उदाहरण होगा।''

कृपया इस लेख के बारे में अपने विचार editorspan@state.gov पर भेजिए।

''मलेरिया से होने वाली पीड़ा अनावश्यक है, और मलेरिया से होने वाली हर मौत अस्वीकार्य है।''

-राष्ट्रपति जॉर्ज डब्ल्यू. बुश
18 फ़रवरी, 2008

जबलपुर के निकट ऐटाखेड़ा गांव में रतन लाल अपने पोते के साथ। जबलपुर फ़ील्ड स्टेशन ने मलेरिया के टीके के लिए प्रस्तावित परीक्षण स्थल के लिए इस गांव को भी चुना है। चुने गए घरों के आगे लिखा कोड मलेरिया केंद्र के वैज्ञानिकों ने दिया है जिसका पहला हिस्सा गांव के बारे में और दूसरा हिस्सा इस घर के बारे में इंगित करता है।

कटनी में मलेरिया के प्रति जागरूकता पैदा करने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा लाउडस्पीकर लगा वाहन। मध्य प्रदेश में स्वास्थ्य विभाग इस तरह के कदम उठाता है।

ऊपर: कटनी के एक अस्पताल में नर्स सीमा सिंह नवजात बच्चे की जांच करते हुए कि कहीं उस पर मां को हुए मलेरिया का असर तो नहीं पड़ा है।

ऊपर दाएं: राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान के जबलपुर फ़ील्ड स्टेशन की प्रयोगशाला में तकनीशियन खून के नमूनों की जांच करते हुए।

दाएं: राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान का जबलपुर फ़ील्ड स्टेशन।

ज़्यादा जानकारी के लिए:

रोग नियंत्रण एवं रोकथाम केंद्र
http://www.cdc.gov/malaria/
राष्ट्रीय मलेरिया शोध संस्थान
http://www.mrcindia.org/jabalpur.htm/
अंतरराष्ट्रीय आनुवंशिक इंजीनियरी एवं जैव-प्रौद्योगिकी केंद्र
http://www.icgeb.org/RESEARCH/ND/Malaria.htm